Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
January to March 2025 E-Journal, Volume I, Issue XLIX, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

वागड़ क्षेत्र में पाषाण पर उत्कीर्ण लोक देवी-देवताओं एवं पूर्वजों की प्रतिमाएं

सीमा डामोर*

* शोधार्थी (दृश्यकला) गोविन्द गुरु जनजातीय विश्वविद्यालय, बाँसवाड़ा (राज.) भारत

प्रस्तावना – राजस्थान में प्रचलित पाषाण प्रतिमाओं का सृजन सदियों से चला आ रहा है। इन प्रतिमाओं में लोक एवं पारम्परिक कला तत्वों को देखा जा सकता हैं। वागड़ क्षेत्र की सांस्कृतिक विरासत के संबंध में यहां की लोक जीवन से पल्लवित लोकाभिव्यक्तियों में निहित प्राचीनतम जनजातीय संस्कृति के आधार बिम्बों को स्पष्ट रुप से देखा जा सकता है।

आदिमानव के प्राकृतिक एवं भौगोलिक परिवेश को देखा जाए तो पाषाण ही एक ऐसा माध्यम रहा जिसमें मानव मन की अभिव्यक्ति को उकेरने व रंगाकन करने को प्रेरित किया। वनों से आच्छादित पहाड़ों और प्राकृतिक वातावरण में निवासरत् आदिमानव ने अपनी जीवन शैली के भावों को मुखरित करने के लिये सर्वप्रथम चट्टानों पर रेखाएं उकेरी तथा उन्हें रंगाकित किया। अपने आस-पास के वातावरण, आखेटक जीवन शैली आदि को अभिव्यक्त किया। ऐसा कहा जा सकता है कि मानव मन के भावों को उकेरने का पहला माध्यम पाषाण ही रहा।

वागड़ के क्षेत्र में अरावली की श्रृंखलाओं के मध्य उबड़-खाबड़ भू-क्षेत्र, वनोंच्छादित भूमि, नदीयों, नालों एवं वन्यजीवों से युक्त यह क्षेत्र पाषाण कालीन बागौर सभ्यता एवं बनास सभ्यता तथा ताम्र पाषाण कालीन आहड़ एवं गिलुण्ड की सभ्यता के अवशेष दीर्घकालीन मानव सभ्यता के निरंतरता के प्रतीक है। यह क्षेत्र जनजाति बाहुल्य होने एवं आधुनिक संसाधनों की कमी होने के बावजूद भी यहां के जीवन में सांस्कृतिक विरासत से ओत-प्रोत है।

मानव की विकास यात्रा के साथ-साथ पाषाण कला में भी विभिन्न परिवर्तन देखने को मिलते है। पत्थरों के औजारों के साथ-साथ मानव ने दैनिम जीवन की उपभोग-उपयोग की वस्तुओं का निर्माण किया जिसमें खड़-खड़ियां, ओखली एवं खरल आदि प्रमुख है। जब मानव सभ्य हो गया तब उसने सामाजिक व पारम्परिक संरचना के अनुरुप लोक भावनाओं के साथ लोक देवी-देवताओं और पूर्वजों को उकेरने के साथ लोक प्रतीक रुपों, लोक प्रतिमानों एवं लोक तत्वों को भी विशेष महत्व दिया है। साथ ही लोक कलाकारों द्वारा सदियों से अपनी इस लोक अभिव्यक्ति से लोक देवी-देवताओं और पूर्वजों का अंकन करने की पारम्परिक प्रवृत्ति को निरंतर उजागर किया।

वागड़ क्षेत्र में विकसित पाषाण कला के कई ऐसे छोटे-बड़े कलागत उदाहरण हमें गांव, कस्बों, नगरों में निर्मित कुण्ड-बावड़ियों में देखने को मिलते है जो जन उपयोगी होने के साथ-साथ स्थापत्य के कलात्मक भावों को भी दर्शाते है। इन कुण्ड-बावड़ियों में लोक देवी-देवताओं की मूर्तियों के अलावा द्वार एवं खिड़कियां की नक्काशी का उच्च रुप दिखाई देता है जो क्षेत्र विशेष की कला कौषलता को दर्शाता है।

वागड़ प्रदेश में प्रचलित पाषाण से निर्मित लोक कलाओं का स्वरुप आदिकाल से देखा जा सकता है। मानव ने अपने धार्मिक भावों को अभिव्यक्त करने के लिये पाषाण से विभिन्न लोक देवी-देवताओं की अनगढ़ सी प्रतिमाएं बनाकर अपने भावों को मुखरित किया है। लोक देवी-देवताओं के साथ-साथ स्थानीय शिल्पकारों ने मंदिर परम्परा में भी अपनी कौशलता का परिचय दिया है।

वागड के प्राचीन परिवेश को देखा जाए तो ऐसे कई छोटे-बडे स्थल हैं जहां पाषाण पर उत्कीर्ण कलागत सृजन को आज भी उसी रुप में देखा जाता है। जिसमें केसरियाजी एवं तलवाड़ा प्रमुख है। आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र में स्थानीय लोक कलाकारों द्वारा छोटे-बड़े आकारों की प्रतिमाओं का निर्माण कर इस प्राचीन परम्परा को जीवत बनाये हुये है। जिसमें स्थानीय जन समुदाय की विशेष भूमिका है।

आदिवासी जनजातिय समुदाय के लोगों द्वारा अपनी मनौतियां पूर्ण होने पर अपने लोक देवी-देवताओं की प्रतिमाएं खरीदकर लाते है और अपनी विधि अनुसार घर के आंगन, खेत, चौक-चोपालों पर बने देवरों में स्थापित करते हैं। साथ ही आदिवासी समुदाय के लोगों की मान्यतानुसार यदि किसी व्यक्ति की अकाल मृत्यु या किसी दुर्घटनावश मृत्यु हो जाये तो उस मृत आत्मा की शांति के लिए उसके भावोनुरुप पूर्वजों की पाषाण निर्मित प्रतिमाएं स्थापित करते है। पूर्वजों को स्थापित करने की परम्परा सदियों से चली आ रही है।

बांसवाड़ के तलवाड़ा ग्राम में सोमपुरा जाति के शिल्पकार पाषाण कला में अपनी महत्वपूर्ण पहचान रखते है। तलवाड़ा से प्राप्त काले पत्थर पर मूर्तियों का निर्माण करते समय सही अनुपात का ध्यान रखते है। कई सदियों से चली आ रही पाषाण कला परम्परा आज भी अपने मौलिक स्वरुप में विद्यमान है। साथ ही यहां पर पूर्वजों की मूर्तियों के साथ-साथ लोक देवी-देवताओं की मूर्ति बनाने की परम्परा रही है। यहां से प्राप्त काला पत्थर सफेद संगमरमर से नरम होता है तथा मूर्तियां बनने के उपरांत उन पर तेल लगाकर धुप में सुखने के लिये रख दिया जाता है जिससे मूर्तियों में चमक और कालापन आ जाता है। आदिवासी क्षेत्र में रहने के बावजूद भी सोमपुरा जाति के लोगों ने अपनी पारम्परिक कला कौशलता को न केवल बनाये रखा बल्कि समृद्ध भी

बनाया।

तलवाड़ा में बहुतायात से पाया जाने वाल 'परेवा' पत्थर से बनी मूर्तियों के कारण यह क्षेत्र पूरे भारतवर्ष में अपनी एक अलग ही पहचान रखता है। यहां निर्मित मूर्तियों में राम-कृष्ण, देवी शारदा, शिव-पार्वती, नंदी, गणेश, महात्मा, महापुरूष तथा पूर्वजों की आकारद मूर्तियां उल्लेखनिय है। साथ ही सूर्य मंदिर, त्रिपुरा सुंदरी, सत्यनारायण, द्वारकाधीश, सिद्धिविनायक, गोकर्णेश्वर, लक्ष्मीनारायण, संभवनाथ आदि मूर्तियां जग प्रसिद्ध है। जैन धर्म से संबंधित मूर्तियां का निर्माण भी यहा भरपूर होता है।

राजस्थान की लोक कलाओं में लोक तत्व, लोक प्रतिमान एवं लोक तत्वों को पाषाण में निर्मित कला रुपों का विशेष स्थान है। वही वागड़ के बांसवाड़ा, डुँगरपुर एवं ऋषभदेव के प्रमुख स्थानों पर लोक देवी-देवताओं की प्रतिमाएं आकृति मूलक कला के साथ-साथ उनमें निहित लोक तत्वों व कलागत सौन्दर्यबोध के रुप में विशिष्ठ पहचान रखते है। यहां निर्मित पाषण आकृतियां आदिवासी समाज की सामाजिक एवं धार्मिक आस्था से जुड़ी हुई है। तथा देवी-देवताओं के स्वरूप के साथ लोक कला तत्वों का समावेष भी दिखाई देता है जो इस लोक कला के वैभव को दृष्टिगत करता है।

वागड़ क्षेत्र में शिल्पकला का प्राचीन इतिहास रहा है। यहां बनने वाली मूर्तियों में भी कला के प्रतीकात्मक भाव को बखूबी दर्शाया गया है। इन मूर्तियों में लक्ष्मी के रुप में कमल, शक्ति के रुप में आयुध-त्रिशुल, मुकुट के रुप में शासक प्रमिमानों को आकरद किया जाता है। साथ ही त्रिभूज प्रगति, उल्टा त्रिभुज अवनती, चतुर्भूज, पंचभूज, षष्टभुज, अष्टभुज आदि का प्रयोग तंत्र-मंत्र में अलंकरण के रुप में भी उजागर किया जाता रहा है।

यहां आदिवासी जनजातिय संस्कृति से संबंधित प्रमुख लोक देवी-देवताओं एवं पूर्वजों की मृण, काष्ठ, एवं पत्थरों की मूर्तियों के बारे में उल्लेखित करने का प्रयास किया गया है। जिनमें प्रमुख रुप से पूर्वजों के सीराबावजी मृतआत्माओं का अदृश्य शक्ति के रूप में स्थापित कर आदिवासी समाज पूजा अर्चना करता है। यह अनगढ़त पत्थरों से लगाकर कर विभिन्न घटित घटनों से मृत्यू होने पर उससे संबंधित मूर्ति बनाकर पूजा-अर्चना की जाती है। तो कहीं-कहीं प्रतिकात्मक मूर्ति बनाकर। वर्तमान में व्यक्ति के मृत्यू के किसी घटना से हुई जैसे मोटरसाईकिल से दुर्घटना से मृत्यू होने पर मोटर साईकिल पर बैठाए घोडे से गिरने पर मृत्यू होने पर घोडे पर सीराबावजी हाथ में बंदूक लिए, हाथ में तलवार या तीर-कमान लिए, सीरा बावजी का सृजन होने लगा। काष्ठ कला एवं मृणकला से बने घोड़ा बावजी, नाग देवता, सीरा बावजी का भी प्रचलन है।

घोडे पर सवार सीरा बावजी : यह पुरुष पूर्वज की घोडे पर सवार मूर्ति अपने परिवाजनों की इच्छानुसार घोडे पर सवार, हाथ में भाला, तीर-धनुष, तलवार लिए आभूषणों युक्त सिर पर पगड़ी, साफा एवं मुकुट धराकर बनवाई जाती है।

स्त्री-पुरूष सीरा बावजी : यह सीरा बावजी स्त्री-पुरुष को खड़ी मुद्रा में बनाया जाता है। इन आकृति में पुरुष धोती, शर्ट एवं पगड़ी पहने बनाये जाते हैं साथ ही स्त्रीयों को अपनी पारम्परिक वेशभूषा के साथ खडी मुद्रा में आकारित किया जाता है।

अकाल मृत्यु एवं दुर्घटना में घटित मृत्यू पर सीरा बावजी : आदिवासी जनसमुदाय द्वारा यदि किसी व्यक्ति की मृत्यू किसी दुर्घटनावश जैसे मोटरसाईकिल की दुर्घटना में मृत्यू होने पर मोटरसाईकिल पर सवार सीरा बावजी एवं बस से दुर्घटना होने पर बस पर सवार सीरा बावजी इत्यादि घटनाओं से संबंधित मूर्तियों का निर्माण कर विधिवत स्थान पर स्थापित किया जता है।

वीर पुरूषों एवं महात्मा के रुप में सीरा बावजी : यदि किसी साधु, महात्मा एवं सन्त की मृत्यु होने पर इनकी वेशभूषा अनुसार हाथ में वीणा एवं पूजा में उपयोग में ली जाने वाली वस्तुओं के साथ सीरा बावजी की मूर्तियां उकेरी जाती है। महात्मा लोगों को देव तुल्य माना जाता है। इन्हें साखल देव भी कहा जाता है। खेत के किनारे स्थापित होने पर खेत के रखवाले या साखल देव कहा जाता है। इन्हें साँप के रूप में आकारद कर पूजा जाता है। इन आकृतियों में विशेषकर एक फणी, दो फणी, पाँच फणी, सात फणी एवं नौ फणी साँप की आकृतियों की मूर्तिया बनवाई जाती है। देवरों पर हाथ की आकृतियों बने शिल्प भी स्थापित किये जाते है। इसके साथ ही आदिवासी समाज के लोकिक भावों अनुरुप साँप की आकृति में लोक देवताओं की मूर्तियाँ, धर्मराज, देवनारायण, तेजाजी, कल्लाजी, गोगाजी को साँप की आकृति मे पूजा जाता है। मूर्ति पर चाँदए सूरज एवं तारों के प्रतीकात्मक चिन्ह भी बने होते है।

इसी क्रम में वागड़ में स्थित समाधी स्थलों पर भी आदिवासी समाज द्वारा अपने-अपने पूर्वजों की प्रतिताएं स्थापित करने का चलन वर्षों पुराना है। पुरुष की समाधि पर पाषाण की बनी मुडी स्थापित की जाती है एवं स्त्रीयों की समाधि पर पगल्ये स्थापित करते है जिसे शोकली कहा जाता है।

मौटे रुप देखा जाए तो यहां की कला संस्कृति का एक जीवन्त उदाहरण है जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में देखा जा सकता है। यहां का सांस्कृतिक वैभव युवा कलाकारों को आकर्षित करता है तथा नये माध्यमों से इन लोक तत्वों को निरुपित करने की जिज्ञासा को भी उजागर करता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भानावत, महेन्द्र, लोक कलाओं का आजादीकरण, मुक्तक प्रकाशन, उदयपुर, 2002, पृष्ठ संख्या-01
2. राव, धनपतसिंह, जनजाति मेले एवं त्योंहार विशेषांक, ट्राईब, समकक्ष व्यक्ति समीक्षित त्रैमासिक पत्रिका, माणिक्य लाल वर्मा आदिम जाति शोध एवं प्रशिक्षण संस्थान, अशोक नगर, उदयपुर, खण्ड-50 (2-4) अप्रेल-दिसम्बर, 2018, खण्ड-51 (1) जनवरी-मार्च, 2019, पृष्ठ संख्या-01
3. जाटव, गिरिराज, मेवाड़ भू-भाग की पारम्परिक कलाएं : एक समीक्षात्मक अध्ययन (रचनात्मकता के परिवेश में) पृष्ठ संख्या-145
4. बरण्डा, यशपाल, जनजातीय संस्कृति एवं परम्पराएँ, आशा पब्लिकेशन्स, प्रथम संस्करण, 2019, पृष्ठ संख्या-77
5. शर्मा, जयसिंह नीरज, भगवतीलाल, राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा, 41वां सस्करण, 2017, पृष्ठ संख्या-92
6. जाट, मोहल लाल, 'दक्षिण राजस्थान की जन जातीय चित्रकला' ऐपेक्स पब्लिशिंग हाउस, उदयपुर, चतुर्थ संस्करण, 2014
7. सामर देवी लाल,'संस्कृति के रखवाले' प्रथम अध्याय राजस्थान के लोक देवता सांस्कृतिक परिवेश भारतीय लोक कला ग्रंथावली-ग्रंथ संख्या-47, प्रथम संस्करण, अक्टुबर, 1980
8. विशिष्ट नीलिमा, 'राजस्थान की मूर्तिकला परम्परा', राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2001
9. कृष्णदास, राय 'भारतीय मूर्तिकला', प्रधान मंत्री, ना.प्र.सभा काशी।
10. ओझा, गौरीशंकर हीराचंद 'बांसवाड़ा राज्य का इतिहास' वैदिक मंत्राल।

****